श्री श्री मां के श्रीमुख के संगीत

(इतिहास सहित)

१

हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल।

दादाजी के मुख से माँ ने सुना था। पश्चात् अपने ख्याल से माँ वही हरिनाम लेती थीं। लेते लेते वह कभी "हरि ॐ" रूप से प्रकट होता था। माँ हरिनाम लेती थीं—यह बात सुनकर अनेक लोग इसी हरिनाम का कीर्तन करते हैं। हम लोग भी अपने नित्य कीर्तन में यह नाम करते हैं।

२

हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम, हरे राम, राम राम हरे हरे॥

माँ ने अपने पित्रालय में बचपन में यह नाम सुना था। बाद में अपने ख्याल से समय समय पर यह नाम करती थीं। यह बात सुनकर बहुत लोग यह नाम भी करते हैं।

३

जय शिव शंकर बम बम हर हर।

भोलानाथजी[1] के शैव-शाक्त होने के कारण माँ से यह नाम करने के लिए

---

१. इनका कौलिक नाम श्रीरमणीमोहन चक्रवर्ती था। भोलानाथ नाम से परवर्ती समय में परिचित हुए थे।

कहने पर माँ के ख्याल से वही नाम होने लगा। इसलिए हमारे नित्य कीर्तन में भी यह नाम किया जाता है।

४

हरे मुरारे मधुकैटभारे, गोपाल गोविन्द मुकुन्द शौरे।

एक बार पौष-संक्रान्ति के दिन कीर्तन के समय भावावस्था में श्री श्री माँ के मुख से यह नाम बहुतों ने सुना था। कोई कोई इस नाम का भी कीर्तन करते हैं।

५

माँ माँ माँ माँ माँ माँ माँ माँ।

भाईजी (स्व० ज्योतिषचन्द्र राय) ने स्वयं ही 'माँ' नाम का प्रचार किया था। अनन्तर भाईजी ने सुना, बहुत पहले एक दिन शक्ति-पूजा के किसी उत्सव के समय यह नाम भी माँ के मुख से निकला था। परन्तु बहुतों को यह ज्ञात नहीं है।

६

ॐ माँ

शाहबाग में एक बार भावावस्था में श्री श्री माँ के मुख से यह नाम निकला था। सुर से 'माँ' 'माँ' नाम करते करते यह निकल आया था।

७

सीताराम सीताराम सीताराम सीताराम।
सीताराम सीताराम सीताराम सीताराम॥

सीताराम सीताराम सीताराम जय सीताराम।
सीताराम सीताराम सीताराम जय सीताराम॥
रामराम रामराम रामराम रामराम।
राम राम राम राम राम राम राम राम॥
राम राम राम राम.....

यह नामकीर्तन माँ के मुख से सुनकर हम में से कोई कोई इस नाम का जप और कीर्तन करते हैं।

८

कृष्ण कन्हैया बंशी बजेया गैया चरैया।
हा रे रे रे.....

एक दिन माँ तारापीठ में अर्ध-शायित अवस्था में थीं। उस समय सुबह के ७ या ८ बजे होंगे। एक अलौकिक प्रकाश के भीतर माँ विराजमान थीं। अगणित स्त्री-पुरुष—बालक-वृद्ध, युवक-युवतियाँ, प्रौढ़-प्रौढ़ाएँ—किसी किसी के हाथ में झंडा, ध्वजा आदि सहित सबके सब आकुल भाव से मत्त होकर हिलते-डोलते, महाध्वनि करते हुए अलौकिक हृदयस्पर्शी स्वर में गगन-पवन आप्लुत करके दीर्घ पथ पर सीमाहीन एकधारा में महान भाव की गति से यह कीर्तन गाते-गाते धीरे-धीरे चलते जा रहे थे—इस प्रकार की बात ही माँ के श्रीमुख से सुनी गयी है।

उपरोक्त पद के साथ निम्नलिखित पदों को भी माँ मिला मिला कर गाया करती हैं—

कृष्ण कन्हैया मेरे नैया।
प्राण कन्हैया पार लगैया।
हा कन्हैया प्राण कन्हैया।

आओ कन्हैया आओ कन्हैया।
आओ मेरे नैया प्राण कन्हैया।
कृष्ण कानाई कहाँ नाई।
मेरे कानाई कहाँ नाई।
कानाई कानाई कहाँ नाई।
प्राण गोपाल ब्रह्म गोपाल।
गोपाल गोपाल गोपाल गोपाल।
प्राण गोपाल ब्रह्म गोपाल।
जय नन्दलाल यशोदा दुलाल।
प्रेम गोपाल ब्रह्म गोपाल।
ब्रजेर राखाल जय नन्दलाल।
गोविन्द गोपाल गोविन्द गोपाल।
प्राण गोपाल हा गोपाल।
हा गोपाल प्राण गोपाल।
कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण।
प्राण कृष्ण हा कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण।
कृष्ण कृष्ण.....

९

हरि हरि गाये जा, प्रभु को रिझाये जा।
प्रेम हरि नाम को, लिये जा भाई दिये जा।।

एक बार इसके कुछ पद माँ ने सुने थे। बाद में एक बार माँ शिलाँग पहाड़ पर मोटर से जा रही थीं। रास्ते में मोटर रुक जाने से माँ थोड़ा पैदल चलते-चलते इन पदों को कीर्तन के रूप में मिला-मिला कर अपने सुर से अपने

ही मन में गा रही थीं। विभु ने इस कीर्तन को सुर के साथ लिख रखा है।

१०

श्री कृष्ण गोविन्द हरे मुरारे।
हे नाथ नारायण वासुदेव।।

इस प्रसंग में माँ ने कहा—"एक बार मथुरा में रात के लगभग १२ बजे मान लो, जैसे कोई सरस सुकण्ठ एक पक्षी गा गा कर उड़ते चलते रहने पर, धीरे-धीरे गली-कूचों में ऊपर उठकर बहुत दूर चले जाने पर जैसे—वह पक्षी कौन है? तुम्हारे प्राणों के प्राण, प्राण-पक्षी, वही ब्रह्मगोपाल, आत्मा जो कुछ कहते हो। शब्द के साथ ही साथ जल बरफ की तरह विग्रह। वह विग्रह शून्य पर कदम रखते हुए विद्युत-गति से सुन्दर अंगभंगि का गठन लेकर नाद-ध्वनि के लय की तरह बहुत दूर जा गायब हो गया।" साथ का एक मनुष्य बोल उठा—"कैसी सुकण्ठ मधुर ध्वनि! ऐसी तो कभी सुनी नहीं है। पक्षी तो नहीं—अदृश्य में किसी के सुकण्ठ से घूम-फिर कर गाने पर जैसे—"

११

हे गोविन्द माधव, जगन्नाथ जगद्बन्धु।
दीननाथ दीनबन्धु, जगन्नाथ जगद्बन्धु।।
पतितपावन करुणासिन्धु, दीननाथ दीनबन्धु।
पतितोद्धारण प्रेमसिन्धु, दीनदयाल दीनबन्धु।।

एक बार प्रयाग के अर्धकुम्भ में डा० पन्नालालजी ने त्रिवेणी-तट पर माँ तथा माँ के भक्तों को लेकर निवास करने के उद्देश्य से तम्बू और झोपड़ी लगायी थी। वह जब मोटर में बिठा कर माँ को अपने तम्बू में लिये जा रहे

थे तब माँ मोटर में बैठे बैठे ही गुनगुनाते हुए अपने भाव में उन पदों को मिला-मिला कर अपने सुर में गाने लगीं। हमने उन पदों को लिख रखा है।

१२

जय गंगाधर शिरोपर, परिधाने बाघाम्बर।
देव देव महादेव, महादेव देव देव॥
स्वयम्भू विश्वनाथ, हे नाथ विश्वनाथ।
हे नाथ विश्वनाथ, हा नाथ विश्वनाथ॥

पूर्वोक्त बार ही (अर्धकुम्भ के समय) एक दिन माँ यमुना के ऊपर से नाव में चलते-चलते संगम की ओर जा रही थीं। संगम में पहुँचने के पहले ही माँ अपने मन से पहले की दो पंक्तियों को मिला-मिला कर अपने ही सुर में गुनगुनाते हुए गा रही थीं। विभु उसी सुर में सुर मिला कर ऊँचे स्वर से सबको लेकर गाने लगा। माँ तो कहती हैं—"ऐसा-वैसा जो कुछ हो जाय, बस।"

द्वितीय २ पंक्तियों के पदों को विशेष भाव और सुर से एक बार काशी में शिवरात्रि के दिन माँ ने मिला-मिला कर बहुत देर तक कीर्तन के रूप में गया था।

१३

आओ मेरे सलोना छलिया रे, वनमाली रे।
आओ मेरे सलोना छलिया रे, वनवारी रे॥

सोलन के राजा श्रीयुत दुर्गा सिंह (योगी भाई) ने शिमला में एक नया मकान बनवाया है। वह माँ को आदर के साथ उस मकान में ले गये थे।

उसके भीतर एक दिन सुबह ७।८ बजे तक माँ अर्धशायित अवस्था में थीं। बगल के कमरे में रह कर मुझे कुछ कीर्तन की ध्वनि सुनाई पड़ी। झट मैं वहाँ पहुँच गयी। देखा, माँ अपने भाव में लेटी हैं। माँ न जाने कैसे अपूर्व और अवर्णनीय भाव और सुर से गा रही थीं। मैं उस हृदयस्पर्शी सुर को सुनते-सुनते सिहरित, पुलकित तथा मन्त्रमुग्ध हो गयी। आँखों में आँसू आ गये। पद, सुर और भाव से वह स्थान किस प्रकार अलौकिक भाव से पूर्ण हो गया था वह अवर्णनीय है। कुछ क्षणों के अनन्तर माँ ने विभु को इशारे से बुलाया। माँ उस समय बात भी नहीं कर रही थीं। नेत्र अर्धनिमीलित थे। विभु के आने पर माँ ने उस सुर को पकड़ रखने के लिए इशारा किया। इस समय पकड़ न रखने से फिर पकड़ा नहीं जा सकेगा, अप्रकट हो जायगा—इशारे से इसे भी समझा दिया। मानो विशेष किसी का प्रकाश है। शायद वह चले जायँ, इसीलिए मानो उन्हें आदर और आग्रह से ग्रहण करने के लिए इशारा किया। विभु बहुत आग्रह से उस सुर को पकड़ने की चेष्टा करने लगा और उस सुर और पदों को कुछ विशेष भाव से पकड़ भी लिया। बाद में माँ ने कहा था—"तुम एकान्त में बैठ कर बीच-बीच में उसे गाने की चेष्टा करना।"

अब दिखाई पड़ता है, कभी लोगों के सामने जभी वह गाने लगता है उन मामूली पदों को भी ठीक ढंग से नहीं गा पाता—न जाने उसे कैसा एक भाव आ जाता है। भीतर मरोड़ कर आँखों में आँसू आ जाते हैं। गला रुँध कर भीतर से काँपते हुए रुलाई आ जाती है।

इस प्रसंग में एक बार माँ ने कहा था—"कीर्तन और ध्वनि जब स्वयं-प्रकाश, तब जल जैसा बरफ, वैसा ही ये शब्द ताल, लय, सुर और भाव के साथ श्री राधा-विग्रह स्वयं ही आकुल, आप्लुत-स्वरूप में जागृत है।"

१४

हे पितः, हे हित, हे ब्रह्मतत्त्वम् ।
हे पितः, हे हित, हे ब्रह्मभूतम् ।
हे पितः, हे हित, हे ब्रह्मस्वरूपम् ॥

काशी में सर्वप्रथम संयम-व्रत हो रहा था। उस समय सुबह ८ बजे से ९ बजे तक मौन होता था। एक दिन माँ अर्धशायित भाव से मौन धारण किये थीं। माँ देख रही थीं—माँ के सामने दक्षिण-मुखी होकर बैठा है ४।५ वर्ष का एक बालक। बालक के सिर पर लम्बे-लम्बे केश हैं। वह बादामी रंग का कपड़ा पहने हुए है और उन पदों को गा रहा है। माँ मौन का ध्यान समाप्त होने पर उन पदों को गाने लगीं। विभु कीर्तन आरम्भ करते ही देखता है कि माँ उसी कीर्तन को गा रही हैं।

उस दिन से हर साल संयम-सप्ताह के मौन-भंग के बाद इस पद को गाने के लिए माँ ने कह दिया, दूसरे समय गाने से मना कर दिया। इसी कारण दूसरे समय यह पद गाया नहीं जाता।

इस पद का अन्तिम "ब्रह्मस्वरूपम्" शब्द अस्पष्ट होने के कारण बाद में माँ ने उसे स्पष्ट कर दिया था।

१५

जपो नाम अविराम प्राणाराम प्राणाराम ।
कृष्ण नाम जपो राम अविराम प्राणाराम ।
राधाकृष्ण सीताराम शिवदुर्गा कालीनाम ।
जपो नाम अविराम प्राणाराम प्राणाराम ।
जपो नाम प्राणाराम राम राम राम राम ।
प्राणाराम प्राणाराम प्राणाराम प्राणाराम ॥

माँ वृन्दावन में हरिकुंज में थीं। एक दिन सुबह डा० पन्नालालजी माँ के

पास बैठ कर जप कर रहे थे। डा० पन्नालालजी की ओर देखते हुए माँ इन पदों को अपने भाव में सुर मिल-मिला कर गा रही थीं। विभु इस कीर्तन को माँ के साथ-साथ कभी-कभी गाया करता है।

१६

क्या करूँ, कैसे करूँ, कैसे भोग लगाया करूँ ?
सब ही तो तू ही तू है, कैसे करूँ, क्या करूँ ?

पूर्वोक्त घटना के कुछ दिन बाद ही माँ हरिकुंज की कुटिया में बैठे अपने भाव में विभोर होकर सांसारिक दृष्टि से परे रहकर देख और सुन रही हैं। एक स्थान में पूजा के सामान, भोग आदि लेकर बैठे महाप्रभु की राधामाई नाम की एक वृद्धा भक्तिन व्याकुल भाव से भगवान के लिए क्रन्दन कर रही है तथा पूजा करने की चेष्टा कर रही हैं। और ऊँचे स्वर से गा रही हैं—"क्या करूँ"..... आदि। वृद्धा केवल गा रही हैं ऐसी बात नहीं, मानो प्राण-मन सौंप कर गद्‌गद् भाव से भगवान के चरणों में अपने को लुटा दे रही हैं। उस समय मानो उन्हें किसी ओर का ख्याल ही नहीं है।

इस स्थान में भी मानो एक दिव्य प्रकाश है! माँ हमें जिस प्रकार देखती हैं उसी प्रकार विविध भाव-भंगियों से न मालूम और भी क्या क्या दृश्य अदृश्य की बातें बतलाया करती हैं। माँ कहती हैं—"तुम लोग कहते न हो कि—'यत्र यत्र नेत्र हेरे तत्र तत्र कृष्ण स्फुरे।' पर तुम लोग स्मरण रखना—उस अप्राकृत लीला में विविध भाव-भंगियों से दृश्य और अदृश्य में अनेक रूप अरूप में वह स्वयं ही वही हैं। वही तो है।"

इस प्रसंग में निम्नलिखित घटना उल्लेखनीय है। एक दिन माँ काशी में सत्संग में बैठी थीं। नारायण स्वामी ने पूछा—"माँ, सुना अबकी कोई एक

आदमी वृन्दावन में अपने शरीर में आग लगा कर यमुना के जल में कूद पड़ा था। असली घटना क्या है माँ ?"

उत्तर में माँ ने कहा—"सुना एक बुड्ढा अपनी पत्नी के साथ ६।७ वर्षों से वृन्दावन में रहकर साधन-भजन कर रहा था। उसका लड़का ग्वालियर में काम करता है। उस बूढ़े का चेहरा, गत बार तुम्हारे आश्रम में शुक्राचार्य नाम से जो आदमी श्रीमद्भागवत का पाठ करने आये थे बहुत कुछ उन्हीं के ऐसा था। उसका शरीर खूब गठीला था। उसके गुरुजी वृन्दावन में ही रहते हैं। वह आदमी बड़ी निष्ठा के साथ साधन भजन करता था। यमुना के तीर तीर में ही भजन कर, लेट-बैठ कर उसका समय बीतता था। किसी से वह मेल-जोल नहीं रखता था, अपने ही भाव में रहता था। सुना, यमुना के भीतर ही एक राधागोविन्द विग्रह पाया है। उसी की पूजा करता और अपने भाव में रहता था।

"उस आदमी ने शायद किसी से सुना था कि वृन्दावन का रजः (धूल खाना अच्छा है। इस लिए वहाँ का रजः खाते-खाते वह कठिन रोग से सिती हो गया। बाद में इलाज करा कर फिर अच्छा भी हो गया था। तब अक्सर वह कहा करता था—'यमुना मैया, अब ले ले।' यमुना के तीर पर भी वह इस भाव से पड़ा रहता था।

"और भी सुनाई पड़ा कि, वह एक दिन घी, मिट्टी का तेल और दिया-सलाई लेकर यमुना के तीर पहुँचा। वहाँ जाकर क्या किया ? अपने कपड़ों में घी-तेल डाल कर दियासलाई से अपने शरीर में आग लगा दी। उसके बाद जब आग खूब जल उठी तो यमुना में कूद पड़ा। आवाज सुनकर कुछ लोग वहाँ दौड़ आये और उसे जल से ऊपर उठा कर तीर के बालू पर लिटा दिया। सारे शरीर में जलने के घाव हो गये थे। उनमें बालू लगने से कैसा भयंकर हो गया था, वह तुम समझ ही सकते हो।

"इस घटना के बाद से वह साधु बाबा इस शरीर (माँ) को देखने के लिए बहुत व्याकुल हो पड़ा और इस शरीर का नाम ले लेकर पुकारने लगा।

"इधर यह शरीर भी उस समय बहुत ठीक नहीं था। हरिबाबा के सत्संग में सदा ही समय पर जाया जाता था। परन्तु उस समय यह शरीर अच्छा न रहने से बाबा के यहाँ और उड़िया बाबा के आश्रम में हर प्रोग्राम में जाना नहीं होता था।

"इतने में एक दिन उसका लड़का आया और अपने बाप की हालत बता कर बोला कि वह माँ का दर्शन करना चाहता है। उसके बाद उस वृद्ध की पत्नी तथा उसकी एक पड़ोसिन दोनों ने आकर बहुत विस्तार के साथ यह घटना बतायी और इस शरीर को वहाँ ले जाने के लिए बहुत आग्रह प्रकट किया। तथा और भी कहा कि वह नाम लेकर 'माँ माँ' कह कर पुकार रहा है। इसके बाद उस स्त्री के लड़के ने भी आकर खबर दी। इस तरह इस शरीर को ले जाने के लिए वे आकर बैठे रहते थे।

"एक दिन उन्हें बता दिया गया—'अच्छा देखा जाय, क्या किया जा सकता है।" फिर एक दिन आकर उन लोगों ने जाने के लिए कहा। अबकी उन्हें बता दिया गया—'अच्छा तीसरे पहर आना।'

"एकाएक उस दिन दुपहर से ही शरीर कुछ स्वाभाविक स्थिति में आया। तीसरे पहर के सत्संग में हरिबाबा के यहाँ जाया गया। वे शायद आशा भी नहीं करते थे कि यह शरीर वहाँ जायगा। जाते ही कहा गया—'दोपहर से यह शरीर चलने लायक हो गया है, इसलिए आया गया।' वहाँ का सत्संग समाप्त होने पर आश्रम में आकर कुछ क्षण बाद परमानन्द से मैंने कहा—'चलो उस बाबा को देख आवें।'

"वे वृन्दावन के एक बहुत पुराने मन्दिर में रहते थे। वे जानते थे कि यह शरीर किसी गृहस्थ के घर नहीं जाता। हरिबाबा के सत्संग से लौटती मोटर

में ही वहाँ जाने की बात हो रही थी और कोई कह रहा था कि रास्ते से योगेन बाबा को भी ले लिया जाय क्योंकि वह यहाँ के बहुत पुराने निवासी हैं। शहर के बहुत से मकानों तथा मन्दिरों को वह जानते हैं। पर चलते समय वह भी यहाँ आ पहुँचा। वह भी साथ चला।

"वहाँ पहुँचने पर दिखाई पड़ा, बाबा को ऊपर से नीचे उतारा जा रहा है। इतने कष्ट के भीतर भी चेहरे पर किसी प्रकार के क्लेश का चिह्न नहीं दिखाई पड़ा।

"उसे जब बताया गया कि—'बाबा मैं आयी हूँ।' तब उसने आंखें खोल-कर देखा और हाथ उठाया। इस शरीर ने उसके सिर और छाती में हाथ दिया। शरीर के किसी-किसी स्थान से खून निकल रहा था। थोड़ी देर वहाँ रहकर पुनः हरिबाबा के कीर्तन में आया गया। इसके दूसरे दिन ही सुनाई पड़ा कि वह श्रीधाम प्राप्त हो गया है।"

[जो वृद्धा "क्या करूँ....." आदि गा रही थी, उसका चेहरा बहुत कुछ उसी आदमी की पत्नी की तरह था।]

१७

श्री कृष्ण का द्वादश-अक्षर मन्त्र।

श्री श्री पूज्य हरिबाबा महाराजजी की महती इच्छा से एक दिन माँ ने द्वादश अक्षर मन्त्र गाकर सुनाया। बाद में कथित किसी समय माँ अपने ख्याल से इस मन्त्र का कीर्तन करती थीं। उस समय से कोई-कोई माँके श्रीमुख से सुनकर नित्य इसका जप भी करते हैं। मां ने यह भी कह दिया था—"तुम लोग स्वयं इस मन्त्र का उच्चारण कर कीर्तन न करना। किसी विशेष महात्मा के मुख से सुनने पर साथ-साथ कीर्तन करना। जप करने में निषेध नहीं है।

१८

ओहे वृन्दावन श्याम, ओहे अखिलपति श्याम।
हे विट्ठल विट्ठल विट्ठल पाण्डुरंग हरि।
हे पाण्डुरंग हरि हे पाण्डुरंग हरि।
हरि हरि हरि हरि हरि हरि हरि।
हा विट्ठल विट्ठल विट्ठल पाण्डुरंग हरि॥

वृन्दावन धाम। माँ फूस की झोपड़ी में लेटी हैं। माँ के पास अदृश्य रूप से कोई गा रहे हैं।

१९

गौरीशंकर सीताराम, व्रजवासी राधेश्याम।

बचपन में इसे श्री श्री माँ लोगों के मुख से सुनकर गाया करती थीं।

२०

नाम करे जा, नाम करे जा, नाम करे जा।
हरि नाम करे जा, सीताराम नाम करे जा।
राम नाम करे जा, शिवदुर्गा नाम करे जा।
शिवदुर्गा काली नाम करे जा, राधाकृष्ण नाम करे जा।
हरि हर नाम करे जा।
नाम करे जा, नाम करे जा, नाम करे जा।
नाम करे जा, नाम करे जा, नाम करे जा॥

१९५८ ई० के मई महीने में माँ एक दिन सन्ध्या के पूर्व राँची आश्रम के काली मन्दिर के दरवाजे के सामने खड़ी होकर कुछ क्षण आरती देख रही थीं। उस समय अपने भाव से लोगों की ओट में काली माँ की ओर देखकर इस प्रकार की बातें माँ के मुख से निकली थीं—"तुम लोकालय में अब तक प्रतिष्ठित थीं।

विशेष कुछ तो बताया नहीं।" परन्तु माँ ने इस विषय में किसी से कुछ कहा नहीं था। घटनाचक्र से इन बातों का आशय बाद में प्रकट हुआ।

राँची आश्रम की काली-मूर्ति स्थापना का तथा और भी कुछ प्रत्यक्ष कहानी का इतिहास भक्तों में कोई-कोई जानते हैं। इसलिए यहाँ उसकी पुनरुक्ति अनावश्यक है। वह मकान पहले वास-गृह के रूप में बनाया गया था। इस कारण यद्यपि बाद में छोटी मन्दिर-चूड़ा छत के बीच में ही बनायी गयी है किन्तु रास्ते से अपरिचित व्यक्तियों के निकट मन्दिर का अस्तित्व ही नहीं प्रतीत होता। ऐसी मनोमुग्धकारी मूर्ति भीतर स्थापित है उसे बहुत लोग ही नहीं जानते।

उस दिन एक भद्र पुरुष ने आकर माँ से बातें कीं। कुछ विशेष काम और बात के लिए उन्हें कई दिनों बाद आने को कह दिया गया। निर्दिष्ट दिन पति-पत्नी दोनों की माँ के साथ सुबह काम और बात की बात हो गयी। भोजन के बाद उस भद्र पुरुष की पत्नी के 'और भी कुछ बात हैं' माँ से कहने पर माँ ने उनसे काली मन्दिर की गली में जा प्रतीक्षा करने के लिए कहा। उन दिनों उस गली में माँ प्रतिदिन ही तीसरे पहर चार बजे तक विश्राम लेती थीं। थोड़ी देर बाद माँ वहाँ बात करने के लिए गयीं। पत्नी से बातें समाप्त होने पर उनके पति ने भी आकर माँ से भेंट की। उनकी सारी बातें खतम होने पर भी दोनों ही बैठे रहे। इस समय मां ने कहा—"माँ काली की मूर्ति बहुत सुन्दर है न? लोग कहते हैं दर्शन से आकर्षण होता है। परन्तु वह जहाँ बैठी हैं खुला प्रकाश न रहने से अच्छा दर्शन भी नहीं होता। वह जैसा दर्शन देंगी। जो करें ठीक ही है।"

इस प्रकार की बात उन्हें मानों अच्छी तरह सुनाई नहीं पड़ी। माँ ने देखा, कुछ कहने का भाव है। इतने में भद्र पुरुष ने माँ से कहा—"माँ, मेरे एक मित्र की विशेष बात है।"

कहा—"उस मित्र का बचपन पूर्वी बंगाल में बीता। जब बरिसाल में थे तब उनके मकान के सामने ही एक छप्पर के घर में काली माँ का

मन्दिर था। भद्र पुरुष प्रतिदिन नींद से उठकर दरवाजा खोलते ही काली माँ का दर्शन पाते थे। पाकिस्तान हो जाने के बाद वे अपना मकान छोड़कर सपरिवार राँची में आ निवास कर रहे हैं। काली माँ के नित्य दर्शन से वंचित होने से उनके मन में बहुत दुःख हुआ। बचपन से ही उन्होंने मन में ऐसा शुद्ध संकल्प कर रखा था कि, भविष्य में हालत सुधर जाने पर अपना मकान बनवा कर उसके सामने मन्दिर बनाकर उसमें काली माता को स्थापित करेंगे। परन्तु उसका वह शुद्ध संकल्प अभी तक कार्यरूप में परिणत नहीं हुआ। गत वैशाख मास में एक दिन रात को उन्होंने स्वप्न में देखा—मानो उन्होंने मन्दिर बनाने का कार्य आरम्भ कर दिया है। मन्दिर में काली माता को स्थापित करने की परिकल्पना तथा आयोजना कर रहे हैं। ऐसे समय स्वप्न में वाणी सुनी कि काली माँ कह रही हैं—'मैं तो यहीं हूँ—आनन्दमयी माँ के आश्रम में।' इस प्रकार की बात सुनने के साथ-साथ स्वप्न के दृष्टि-पट पर राँची का आश्रम और उसके आस-पास का सब कुछ उनके सामने स्पष्ट भासित होने लगा। वह स्वप्न में ही कातर भाव से काली माता को लक्ष्य कर बोल उठे—'तो क्या माँ तुम क्षण भर के लिए भी मेरे यहाँ न आओगी?' स्वप्न टूट गया। परन्तु उनके मन मन में कुछ दुःख का भाव छा गया।"

इस घटना की बात सुनकर माँ ने भद्र पुरुष से कहा—"अपने मित्र को कल ले आना।" फिर हँसकर माँ ने कहा—"जिसने माँ से बातें की हैं सभी उसका दर्शन करेंगे।" भद्र पुरुष ने कहा—"वह बात प्राइवेट है।" माँ ने कहा—"उन्हें कहना, इस शरीर से कहने में कोई हानि नहीं है।" माँ के राँची आने पर इस स्वप्न की बात माँ से कहने की इच्छा उनमें पहले ही थी।

दूसरे दिन रात को वह सज्जन माँ के पास आये और सबके सामने उस घटना को और भी स्पष्ट रूप से बताया। छलछलाते नेत्रों से माँ की ओर एकटक देखते हुए उस सज्जन ने पूछा—"तो मैं क्या करूँगा माँ?" माँ ने कहा—

"देखते जाओ, क्या होता है। तुम मन्दिर की चेष्टा करो। उसके बाद जो हो जाय। वह जो करें।"

इस घटना को सुन लेने पर सभी ने सोचा, उस दिन सन्ध्या आरती के समय माँ के ख्याल से जो बातें निकली थीं उसके बाद ही मानो काली माता का लोकालय में आने की खबर प्रकट हुई है।

राँची आश्रम की काली माता के विषय में हाल की और भी एक अलौकिक घटना माँ के श्रीमुख से सुनने का सौभाग्य हमें हुआ है। पूर्वोक्त घटना के दूसरे दिन माँ दुपहर को मन्दिर की गली में विश्राम कर रही थीं। ऐसे समय माँ ने देखा कि मन्दिर के दरवाजे के सामने एक ग्रामीण बालक सारे अङ्गों में धूल-मिट्टी पोते और आधे नंगे शरीर में तन्मय होकर ये दोनों पद गा रहा है—

नाम करे जा, नाम करे जा, नाम करे जा।
नामे रुचि भावे पुष्टि हबे रे (तुइ) नाम करे जा॥

माँ ने बाद में बताया था—उस दिन भी लेटे-लेटे माँ काली माता के उद्देश्य से अपने ख्याल में कह रही थीं—"कल तो वैसा किया। आज भी कुछ करोगी क्या?" उस बात के प्रसंग में माँ के ख्याल में आया था—"गोपाल भी तो मन्दिर में है।"

●